समुन्दर सिंह सैंगर
विज्ञान में स्नातक करने के बाद करीब 5 साल से दिगन्तर शालाओं में बतौर विज्ञान शिक्षक कार्यरत।

बच्चों के साथ शिक्षण कार्य द्वंद्वात्मक तरीके से चलता है। शिक्षा की प्रक्रिया में जहां शिक्षक एक ओर बच्चों को सिखा रहा होता है वहीं खुद भी सीख रहा होता है। इसी द्वंद्वात्मक प्रक्रिया का बयान करता है यह लेख।

शिक्षक बनने की ओर

मैं एक शिक्षक हूं और दिगन्तर की बन्ध्याली शाला में पढ़ाता हूं। दिगन्तर शालाएं अनेक मायनों में आम स्कूलों से अलग हैं। एक ही तरह के स्कूलों का अनुभव रखने वाले लोगों के लिए इन स्कूलों की बहुत-सी बातें चौंकाने वाली हो सकती हैं। जैसे कि यहां कक्षाएं नहीं होतीं, सीखने के अगले स्तरों पर जाने के लिए बच्चों को साल भर तक एक ही समूह में नहीं बने रहना पड़ता और इसके लिए साल में कभी भी परीक्षाएं भी नहीं देनी होतीं। बच्चे कक्षाओं के स्थान पर समूहों में बंटे होते हैं। आम स्कूलों में जहां एक कक्षा में बच्चे को एक वर्ष तक बने रहना पड़ता है वहीं यहां बच्चा अपनी सीखने की गति के हिसाब से आगे बढ़ता रहता है। कौन बच्चा किस समूह में पढ़ेगा इसका निर्धारण उसके सीखने के स्तर, उम्र आदि से होता है। हालांकि यह कोई नियम नहीं है फिर भी प्राथमिक स्तर पर अधिकांशतः एक ही शिक्षक दिनभर और वर्ष भर एक ही समूह में शिक्षण कार्य करवाता है। बच्चों की आजादी को तब तक चुनौती नहीं दी जाती जब तक कि वे दूसरों के लिए समस्या पैदा नहीं करने लगते। बच्चों के लिए दण्ड और भय नहीं होता। न तो शिक्षक को सर्वज्ञाता माना जाता है और न ही उनकी सत्ता अक्षुण्ण होती है। बच्चे अपनी बातें शिक्षकों से बेझिझक कह सकते हैं। यहां तक कि कुछ गड़बड़ लगने पर झगड़ भी सकते हैं। शाला की सफाई से लेकर तमाम व्यवस्थाओं में शिक्षक और बच्चे साझी तौर पर शामिल होते हैं। इसके अलावा भी बहुत-सी बातें हैं जिन्हें स्कूल में देखकर ही समझा जा सकता है।

मैं अभी बन्ध्याली शाला के उच्च प्राथमिक समूहों में विज्ञान पढ़ाता हूं। मेरा यह अनुभव इनमें से एक समूह- किरण समूह- के अनुभव के बारे में है। किरण समूह 14 से 16 साल तक के लड़के-लड़कियों का आठवीं के समकक्ष का एक समूह है। इस समूह में किशोरावस्था की 16 लड़कियां और 12 लड़के हैं जिनमें से कुछ बच्चों का निकाह हो चुका है, कुछ की सगाई हो चुकी है तो कुछ की शादी की बातें घर में चल रही हैं। सभी बच्चे एक-दूसरे के घर-परिवारों से भली-भांति परिचित हैं। इनमें से ज्यादातर बच्चे अल्पसंख्यक वर्ग से ताल्लुक रखते हैं और इन

लेखक संपर्क
ए-24, नूर नगर, लूनियावास,
जयपुर-302031 (राजस्थान)

बच्चों के ज्यादातर अभिभावक बहुत ही कम पढ़े-लिखे हैं या फिर अनपढ़ हैं।

एक दिन समूह में शिक्षण की मेरी योजना में मुझे सभी बच्चों के साथ प्रजनन तंत्र पर चर्चा करनी थी। खासतौर से मासिक चक्र के बारे में कि यह क्या होता है, कब होता है ? इसके क्या कारण होते हैं ? हमारे समुदायों में इसे कैसे देखा जाता है और इसे लेकर किस तरह की भ्रांतियां हैं तथा मासिक चक्र के दौरान किस तरह की सावधानियां बरतनी चाहिएं ?

जब मैं समूह में पहुंचा तो सभी बच्चों को एक घेरे में बिठाकर अपनी चर्चा की शुरुआत मैंने किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तनों से की। मैंने सबसे पहले किशोरावस्था में लड़कों में होने वाले परिवर्तनों पर बातचीत आरंभ की कि किशोरावस्था के दौरान लड़कों में किस तरह के परिवर्तन होते हैं ? बच्चों ने बताया कि इस उम्र में लड़कों के दाढ़ी-मूंछ आने लगती हैं, आवाज में भारीपन आने लगता है, मुंह पर कील-मुंहासे होने लगते हैं, साथियों के साथ रहना अच्छा लगता है। यह पूछने पर कि इसके अलावा भी कोई परिवर्तन होते हैं, बच्चों ने थोड़े संकोच के साथ बताना शुरू किया कि जननांगों के आसपास बाल आने लगते हैं और लड़कियों को पसंद करना तथा लड़कियों के बारे में बातें करना अच्छा लगता है।

इसके बाद मैंने किशोरावस्था के दौरान लड़कियों में होने वाले परिवर्तनों के बारे में पूछा। बच्चों ने बताया कि इस समय में बदन में निखार आ जाता है, स्तनों का विकास होने लगता है, कूल्हे व जांघों का मोटा होना आरंभ हो जाता है, सज-संवरकर रहना व लड़कों के बारे बातें करना तथा सहेलियों के साथ रहना अच्छा लगता है। इसके अलावा क्या कुछ और परिवर्तन होते हैं, यह पूछने पर एक बालिका ने धीरे से कहा, 'लड़कियां बड़ी हो जाती है ?' जब उससे बड़ी होने का मतलब पूछा तो दूसरी बालिका ने धीरे से कहा कि, 'महिना शुरू हो जाता है'। बालिका के यह कहते ही सबके कान चौंकन्ने हो गए और हल्की-सी फुसफुसाहट शुरू हुई। लड़के भी इसके बारे में जानने को उत्सुक नजर आए। कुछ बालिकाओं को छोड़कर ज्यादातर बालिकाएं असहज महसूस कर रही थीं। समूह के महौल में थोड़ा परिवर्तन दिखाई देने लगा।

मैंने महसूस किया लगा कि हमारा सामाजीकरण समूह में पंख पसार रहा है। बच्चों के बीच समस्या ये नहीं थी कि वे इसके बारे में 'जानते' नहीं थे बल्कि समस्या समाज के द्वारा पैदा किए गए रहस्य की थी जिसमें कुछ विषयों पर सार्वजनिक तौर पर बात की जा सकती है और कुछ पर नहीं। यह चर्चा उस रहस्य से पर्दा हटाती थी। बच्चों ने उस गोपनीय दुनिया की दहलीज पर पैर रख दिया था लेकिन समूह में सभी के बीच इस चर्चा के आरंभ होने से वे ज्यादा असहज थे। इन विषयों पर बच्चों का असहज होना कोई नई घटना नहीं है। जब हम भी पढ़ते थे तो शिक्षक अक्सर इस तरह के मुद्दों को या तो बच्चों को खुद पढ़ने के लिए छोड़ दिया करते थे या फिर लड़कियों और लड़कों के लिए अलग-अलग कक्षाओं का इंतजाम करते थे जिसमें महिला शिक्षिका बालिकाओं को पढ़ाती थी और पुरुष शिक्षक बालकों को। लेकिन बात निकल चुकी थी इसलिए एक लड़के ने पूछ ही लिया कि, 'ये महिना क्या होता है ?' मैंने बच्चों को आपस में चर्चा करने के लिए थोड़ी देर ढीला छोड़ दिया। मैंने देखा कि एक बालिका ने संकोच के साथ ही लेकिन बताया कि महीना क्या होता है। चर्चा से पता चला कि लड़के मासिक चक्र के बारे में बहुत ही कम या न के बराबर जानते हैं। इसके बारे में हमारे समुदायों में लोग क्या सोचते हैं, इस बारे में बातचीत शुरू हुई तो वही परिचित बातें सामने आने लगीं कि मासिक धर्म के दौरान मां या बड़ी बहनें अछूत जैसा व्यवहार करने लगती हैं। जिन जगहों को 'पवित्रता' के दायरे में लाया जाता है उन्हें वहां जाने से रोका जाता है। खासतौर से रसोई या पूजास्थल।

मैं नहीं जानता कि इस विषय के साथ 'अपवित्रता' की धारणा कैसे जुड़ गई लेकिन यह सच है कि हमारे सार्वजनिक व्यवहार बच्चों के दिमाग में यौन और यौनिकता से संबंधित प्रश्नों तथा व्यवहारों को बहुत पहले से ही अनुचित या पाप की तरह ठूंस देते हैं। इसे जीवन में घटने वाली रोजमर्रा की घटनाओं से काटकर देखने और पवित्रता या अपवित्रता से जोड़कर देखने ने ही इन विषयों को सार्वजनिक चर्चाओं से दूर रखा है। इसके पीछे हर धर्म की अपनी मान्यताएं भी हैं जो यौनिक व्यवहारों को नियंत्रित करने के लिए इसे पाप के तौर पर प्रस्तुत करती हैं। इन वजहों से इस तरह के मुद्दों पर सार्वजनिक तौर पर चर्चा करना शिक्षक के लिए भी बड़ी चुनौती पेश करता है कि वह इस 'वर्जित क्षेत्र' में प्रवेश करे तो कैसे करे।

यह विषय चर्चा के लिए खुल गया था और धीरे-धीरे बच्चे भी चर्चा के दौरान थोड़े सहज महसूस करने लगे थे। इस चर्चा के दौरान बालिकाएं उनके साथ घर में होने वाले बरतावों और अपने अनुभवों की बात कर रही थीं कि उन्हें रसोई में नहीं घुसने दिया जाता, पानी के मटके से पानी नहीं लेने दिया जाता, खाना कोई और डालकर देता है या खेलने-कूदने से भी मना किया जाता है; इत्यादि। लड़के संभवतः अपने-अपने परिवारों में ऐसे व्यवहार देखते तो थे लेकिन अब शायद उन्हें समझ आ रहा था कि 'राज' क्या है और ऐसा किस वजह से होता है।

यह चर्चा चल ही रही थी कि राजस्थान के जयपुर जिले के फागी ब्लॉक के करीब 20 सरकारी शिक्षक शाला अवलोकन के लिए आए। उनमें से दो शिक्षक हमारे समूह में भी अवलोकन के लिए आ गए। उन्हें यह देखकर लगभग आश्चर्य हुआ कि इस विषय पर एक साथ लड़के और लड़कियों के साथ बातचीत हो रही है और वह भी

पुरुष शिक्षक के द्वारा। वे इस समूह में थोड़ी देर रुके और वापस बाहर चले गए। वे पुनः अपने कुछ साथियों को लेकर समूह में आए व अवलोकन करने लगे। उनकी उपस्थिति का समूह चर्चा पर कोई असर नहीं हुआ (दरअसल, दिगन्तर शालाओं में आने वाले अवलोकनकर्ताओं से ये बच्चे सहज हो चुके हैं)। चर्चा काफी रुचि व जोर-शोर से चल रही थी। बच्चे इस विषय पर बहुत कुछ जानना चाहते थे, इसलिए वे हर किस्म की जिज्ञासा को शांत करना चाहते थे। बच्चे पूछ रहे थे कि मासिक चक्र एक निश्चित समयान्तराल पर ही क्यों आता है, किस उम्र में आना शुरू होता है, यह कितने दिन चलता है, क्या गर्भावस्था के दौरान भी मासिक धर्म आता है; इत्यादि सवाल उनकी दबी जिज्ञासा को सामने रख रहे थे। बच्चों की भागीदारी कुछ इस कदर बढ़ चुकी थी कि लंच टाइम शुरू होने की भी उन्हें परवाह नहीं थी। वे चर्चा को स्थगित करना नहीं चाहते थे। बच्चों की भागीदारी और जिज्ञासा को देखकर मेरा मन भी चर्चा बंद करने का नहीं था लेकिन लंच टाइम के करीब 10 मिनट गुजर जाने के बाद अगले दिन इस चर्चा को फिर करने के लिए स्थगित करना पड़ा। बच्चे व अवलोकनकर्त्ता समूह से खड़े होकर चले गए। लंच के दौरान भी कई बच्चे इस पर आपस में चर्चा करते हुए नजर आए।

शाला समय खत्म होने के बाद शाम को अवलोकनकर्त्ताओं के साथ दिनभर के अनुभवों पर चर्चा शुरू हुई। अवलोकन के लिए आए राजकीय शाला के शिक्षकों ने बहुत-सी और बातों के साथ इस विषय पर किरण समूह में चल रही चर्चा व बच्चों की भागीदारी पर आश्चर्य जताया। वे यह जानना चाहते थे कि इतने संवेदनशील मुद्दे पर लड़के व लड़कियां एक ही साथ बैठकर इतनी सक्रियता से और बेझिझक होकर कैसे भागीदारी कर पा रहे थे और वह भी एक पुरुष शिक्षक के साथ।

उनका अवलोकन तो सही ही था कि इन विषयों को स्कूल में 'वर्जित' माना जाता है। शायद अधिकांश शिक्षकों को ऐसा लगता है कि इस विषय पर चर्चा करने से स्कूल की गरिमा खतरे में पड़ जाएगी। शिक्षकों के द्वारा पूछे गए सवालों के आधार पर मुझे लगा कि हमारे स्कूलों में यह पहले से ही मान लिया जाता है कि :

- इन मुद्दों पर लड़के व लड़कियों को एक साथ बिठाकर खुलकर चर्चा करना मुश्किल है।
- समूह/कक्षा में किशोर उम्र के बच्चे शिक्षक के साथ इस प्रकार के कार्य में सक्रिय भागीदारी नहीं कर सकते।
- किशोर उम्र की बालिकाओं के साथ एक पुरुष शिक्षक के द्वारा इन संवेदनशील मुद्दों पर कार्य कराना बहुत मुश्किल है और अच्छी समझ बनाना तो असंभव है।
- यदि इन विषयों पर काम करवाना ही है तो लड़के लिए पुरुष शिक्षक और लड़कियों के लिए महिला शिक्षिका का होना लाजमी है।

इसके अलावा मुझे लगा कि शायद अधिकांश शिक्षकों को लगता है कि इस तरह के विषयों पर किशोर-किशोरियों के साझे समूह में काम कराने से 'गड़बड़ी' पैदा हो सकती है। यह शिक्षक का एक खास शंकाशील नजरिया है जो काम आरंभ करने से पहले ही उसे निराशा में ले जाता है और किसी भी तरह की शुरुआत को काम आरंभ करने से पहले रोक देता है। और यदि किसी तरह की बाध्यता के तहत उसे इस तरह के मुद्दों पर काम करना भी पड़ता है तो इस नजरिए के चलते वह अपनी असफलता या हताशा पहले से ही तय कर चुका होता है।

मैं इस अनुभव में इस विषय पर काम करने की प्रक्रिया के बजाय काम करने में आने वाली चुनौतियों पर ध्यान केन्द्रित करूंगा। जिसमें हमारे सामाजीकरण से लेकर शिक्षक की क्षमताओं तक की चुनौतियां शामिल हैं।

आज समूह में जो चल रहा था, हो सकता है वह किसी शिक्षक को बहुत ही सहज और आसान नजर आए। वास्तव में इन मुद्दों पर चर्चा करने की अपनी परेशानियां हैं। समूह में आज जो कुछ भी चल रहा था उसके पीछे सोची-समझी विस्तृत योजना, समय के साथ बनी समझ और साथी शिक्षकों का सहयोग था। इस विषय पर सरकारी शिक्षकों के साथ हुई चर्चा को यदि मैं पलटकर देखूं तो मुझे साफ तौर पर पहली बार समूह में चर्चा के द्वंद्व, समस्याएं, असहजता और इसकी चुनौतियां याद आ रही हैं। ये चुनौतियां दोतरफा हैं। एक तरफ बच्चों एवं शिक्षक के सामाजीकरण से उत्पन्न चुनौतियां हैं तो दूसरी तरफ इस विषय के बारे में स्वयं शिक्षक की समझ की भी चुनौती है। संभवतः ये अनुभव बयान कर पाए कि किस तरह एक शिक्षक को इन चुनौतियों से जूझना होता है। शिक्षक के सामने यह स्थापित करने की चुनौती भी होती है कि अन्य विषयों की भांति इन विषयों पर भी सहजता से बात की जा सकती है और किसी भी विषय के बारे में जानना शर्मसार नहीं करता। प्रजनन तंत्र या मासिक चक्र हमारे जानने का वैसा ही विषय हैं जैसे पाचन तंत्र या पेड़-पौधों के बारे में जानना या इतिहास के बारे में। यह सहजता उत्पन्न कर पाना भी एक चुनौती होती है। मैं अपने उन अनुभवों को भी बांटना चाहता हूं जो इस विषय पर काम करते हुए पहली बार हुए।

शिक्षक को शिक्षण के दौरान यूं तो हर क्षण बहुत-सी चुनौतियों का सामना करना होता है। हरेक शिक्षक को ठीक से काम करने के लिए इन चुनौतियों के हल स्वयं खोजने होते हैं। एक हद तक इन

चुनौतियों के समाधान अनुभव से तो दूसरी तरफ विषय की समझ से खोजे जा सकते हैं। बच्चों से ऐसे विषयों पर बेझिझक बातचीत के लिए ऐसा माहौल तैयार करना होता है जो सीखने के लिए सहज और अनुकूल हो। ये चुनौतियां शिक्षक को बहुत कुछ सिखा जाती हैं और उसके नजरिये में भी बदलाव ला देती हैं।

मेरा पहला अनुभव उस समय का है जब मैंने पहली बार दिगन्तर की बन्ध्याली शाला के उच्च प्राथमिक समूहों में विज्ञान शिक्षक के रूप में काम शुरू किया था। इस वर्ष सुरभि और खुशी समूह के 41 बच्चे आठवीं बोर्ड की परीक्षा दे रहे थे (जैसा कि ऊपर कहा गया है कि दिगन्तर में परीक्षा नहीं होती लेकिन दिगन्तर शाला में आठवीं के समकक्ष स्तर तक की पढ़ाई पूरी करने के बाद मुख्यधारा के स्कूलों में आगे प्रवेश लेने के लिए आठवीं पास करने का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए दिगन्तर के बच्चों को आठवीं की प्राइवेट परीक्षा देनी होती है)। राजस्थान के पाठ्यक्रम में आठवीं की पाठ्यपुस्तक में प्रजनन तंत्र, परिपक्वता एवं स्वास्थ्य, अंतःस्रावी तंत्र व यौन संक्रमण रोग पर अध्याय थे। हालांकि दिगन्तर में शिक्षक के पास यह अधिकार होता है कि यदि वह चाहे तो किसी अन्य पाठ्यपुस्तक या पाठ्यसामग्री से इन विषयों पर काम करा सकता है। लेकिन मैंने चर्चा आरंभ करने के लिए इन्हीं पाठ्यपुस्तकों को माध्यम बनाया। इन मुद्दों पर सिर्फ खानापूर्ति करना मेरा मकसद नहीं था बल्कि मैं बच्चों की अच्छी समझ बनाना चाहता था। क्योंकि यदि हम यह समझना चाहते हैं कि मानव शरीर में होने वाले परिवर्तनों का उसके मन पर क्या असर होता है तो इसे ठीक तरह से समझना जरूरी है। मुझे जिन बच्चों के साथ शिक्षण कार्य करना था वे सभी किशोरावस्था में थे और इनमें से अधिकतर लड़कियां थीं। इस समूह में भी कुछ बच्चों का निकाह हो चुका था। कुछ पति-पत्नी भी थे लेकिन गोना नहीं हुआ था तथा कुछ बच्चों की बचपन में ही सगाई हो चुकी थी।

मैं सोचने लगा कि इन विषयों पर किस तरह से बातचीत आरंभ की जाए। मुझे शंका थी कि बच्चे भी इन मुद्दों को समझ पाएंगे या नहीं। बच्चों के साथ किन्हीं संवेदनशील मुद्दों पर बात करने के लिए आवश्यक सहज संबंध भी इन बच्चों के साथ मेरे नहीं बने थे। सभी परिस्थितियां मेरे विपरीत थीं। मैं असमंजस में था कि कैसे कार्य कराऊं। काम आरंभ करने का आत्म-विश्वास नहीं बन पा रहा था। अतः मैंने पुराने शिक्षक साथियों से भी सलाह-मशविरा किया। मुझे पता चला कि पहले इन विषयों पर महिला शिक्षिका व पुरुष शिक्षक मिलकर कार्य कराते रहे हैं। मेरे सामने भी यह विकल्प था कि मैं किसी महिला शिक्षिका की मदद ले लूं। लेकिन यह सुझाव मुझे कुछ ठीक नहीं लगा और न ही यह मेरी समस्या का समाधान था। मैंने तय किया कि कार्य तो मैं ही कराऊंगा चाहे मुझे कितनी भी मेहनत करनी पड़े। शिक्षकों से बातचीत के बाद मुझे यह भी पता चला कि पहले भी एक बार पुरुष शिक्षक ने इन विषयों पर काम करने का प्रयास किया था। इससे मुझे ढाढ़स तो बंधा लेकिन इसमें समस्या ये थी कि जब पुरुष शिक्षक ने काम करवाया तो दूसरे ही दिन एक बालिका की मां काफी गुस्से में शाला आई और हंगामा खड़ा कर दिया। उसने आते ही पूछा, 'मुझे बताओ कौन-सा मास्टर बच्चों को यह सब सिखा रहा है कि छोरा-छोरी कैसे पैदा होते हैं।'

यह भी अपने-आपमें एक चुनौती थी और इससे मेरा दिल बैठ रहा था। मेरा आत्म-विश्वास खोता जा रहा था। मैंने पाया कि इस काम को बेहतर करने के लिए परिस्थितियां अनुकूल नहीं हैं। मन में द्वंद्व था, डर था। मैं अनिर्णय की स्थिति में था। काफी सोच-विचार व साथियों के साथ बात करने के बाद मैंने पाया कि यह मामला बहुत संवेदनशील है। बहुत ही सावधानी के साथ काम करना होगा। साथ ही पूरी तैयारी और योजना से काम करना होगा।

मन का द्वंद्व तब समाप्त हुआ जब कुछ अनुभवी साथियों की मदद से मैंने इस पर काम करने की योजना बनाई। साथी शिक्षकों ने सुझाव दिया कि यदि आप प्रजनन तंत्र पर काम करना चाहते हो तो बजाय इस विषय पर सीधे बातचीत शुरू करने के पहले आप पेड़-पौधों व पशु-पक्षियों के प्रजनन पर कार्य कराएं। मेरा अनुभव नहीं था लेकिन मुझे लगा कि मानव प्रजनन या प्रजनन तंत्र पर काम करने के लिए पेड़-पौधों या पशु-पक्षियों से बात आरंभ करने से क्या मदद मिलेगी ? क्योंकि इंसानों व अन्य जानवरों के प्रजनन की क्रियाविधि में कुछ अवधारणात्मक अंतर हैं। अन्य जीवों में जनन सिर्फ संतानोत्पत्ति के लिए होता है लेकिन इंसानों में यह केवल संतानोत्पत्ति के लिए नहीं होता बल्कि इसके साथ सामाजिक, भावनात्मक व आपसी संबंधों का काफी महत्त्व होता है। अन्य जीवों में संतानोत्पत्ति का एक निश्चित समय होता है और वे उसी समय जनन कर सकते हैं लेकिन इंसान हर समय जनन करने में सक्षम है। इसमें मासिक चक्र पाया जाता है। पशु-पक्षी व जानवरों में जनन तंत्र का अध्ययन कर या इन पर समझ बनाकर बच्चों की उनमें होने वाले परिवर्तनों को समझने में मदद नहीं की जा सकती।

लेकिन जैसा कि अनेक बार लोगों के अनुभव काम आते हैं। मुझे जल्द ही समझ आ गया कि इस तरह के संवेदनशील मुद्दे पर शुरुआत सहज ढंग से करने के लिए यही रास्ता उचित है। बच्चों को यह सहज ही समझ आ जाएगा कि प्राणी मात्र में अपनी प्रजाति की वृद्धि और समृद्धि के लिए प्रजनन आवश्यक है और यह बहुत ही प्राकृतिक लक्षण है। मैंने इसके साथ ही इस विषय को बहुत सहजता से समझा पाने में सक्षम किताबें भी छांट लीं। उपरोक्त योजना के तहत मैंने सबसे पहले पुस्तकालय से 'बच्चे कैसे बनते हैं', 'बेटी करे सवाल', 'लेडीज हेल्थ गाइड', 'शरीर अंतःक्रिया विज्ञान', गर्भावस्था, प्रेग्नेन्सी एण्ड बर्थ आदि पुस्तकें ले लीं।

इसके साथ ही बच्चों से सहजता स्थापित और उपयुक्त माहौल बनाने के महत्त्वपूर्ण कार्य करने थे। लगभग डेढ़ महीने की तैयारी के बाद मुझे लगने लगा कि अब समूह में इस विषय पर काम किया जा सकता है।

मैंने पेड़-पौधे कैसे बनते हैं, इससे चर्चा आरंभ की। सभी बच्चे सहज थे। बीज का बनना और फिर बीज से पौधा बनने की प्रक्रिया के बारे में सभी सहज रूप से जानते थे। इस चर्चा में बीज के बनने और उससे पौधा बनने को मैंने रेखांकित किया। साथ ही पूछा कि यदि बीज नहीं हो तो क्या पौधा बन सकता है ? सभी बच्चों ने कहा कि पौधा बनने के लिए बीज का होना जरूरी है। फिर मैंने पूछा कि यदि बीज को सूखी मिट्टी में डाल दें, खाद-पानी नहीं दें तो क्या बीज उग सकता है ? ये बातें बच्चों के सहज ज्ञान की थीं। अतः इनमें उन्हें समस्या नहीं थी। वे इसे नितान्त प्राकृतिक घटना मानकर जवाब दे रहे थे।

इसके बाद पक्षियों में प्रजनन कैसे होता है, इसे समझने की शुरुआत की। बच्चों ने सहज ही कहा कि पक्षी अंडे देते हैं। मेरे यह पूछने पर कि अंडे कैसे बनते हैं तो समूह में चुप्पी छा गई। मैंने पूछा कि क्या आपने पक्षियों को अंडे देते हुए देखा है ? यदि पक्षी अंडे देते हैं तो अंडा कैसे बनता है ? अंडा बनने के लिए पक्षियों के आपसी संसर्ग को समझाना मुझे थोड़ा मुश्किल लगा। मैं यह समझ पा रहा था कि यह मेरी ही असहजता और अनुभव की कमी है कि मैं बच्चों को सहजता से बता पाने में सफल नहीं हो रहा हूं। खैर...मैंने कोशिश की और पूछा यदि नर और मादा नहीं मिलें तो क्या अंडे बनना संभव होगा ? मुझे आशंका थी कि शायद बच्चों ने कभी पक्षियों के संसर्ग को दर्ज नहीं किया है। मैं आगे बढ़ गया और जानवरों में प्रजनन की बात करना आरंभ किया। मैंने सबसे पहले पूछा कि हमारे आसपास कौन-कौन से जानवर होते हैं ? फिर अगला सवाल था कि जानवरों में बच्चे कैसे होते हैं ? बच्चों में असहजता थी। हालांकि शायद जानवरों के प्रजनन के अनुभव उनके अनुभव के दायरे में आते थे। इसलिए वे जानवरों के आपसी संसर्ग को समझ पा रहे थे। इस पर चर्चा के बाद हम इंसानों में प्रजनन कैसे होता है, इस मुद्दे पर आए। यहां तक पहुंचने में मेरा मन लगातार यही सोचता रहा कि अब इसे आगे कैसे बढ़ाऊं।

इस चर्चा में सबसे खास बात जिसे समझाना मुश्किल है वह ये कि इंसानी प्रजनन को समझाने में नर-मादा के संसर्ग को समझाने में बहुत असहजता होती है। इसलिए मैंने इससे पहले किशोरावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तनों पर भी चर्चा की। एक दिन में चर्चा समाप्त होने वाली नहीं थी इसलिए अगले दिन के लिए मैंने किताबें पढ़ने को दीं। मैं भी अपने सोचने के लिए कुछ समय चाह रहा था। अगले दिन चर्चा करना सहज था क्योंकि बच्चों ने कुछ किताबें पलटकर देखीं थीं।

पहली बार मैंने यह चर्चा की थी। इससे पहले न तो मुझे कभी इस बारे में पढ़ाया गया था और न ही मैंने कभी किसी से खुलकर बात की थी। मेरी स्वयं की समझ और सहजता का स्तर भी इस बारे में बात करने के लिए बहुत अच्छा नहीं था। लेकिन जब मैंने इस विषय पर बात की तो मेरे अंदर धुंधलका खत्म होने लगा और वास्तव में मुझे यह समझ में आने लगा कि इस तरह के मुद्दों पर बातचीत करने में शिक्षक की असहजता बच्चों को कैसे असहज बनाती है। यदि शिक्षक तैयारी के साथ बिलकुल ही उसी तरह इस विषय को भी पढ़ाए जैसे बाकी विषयों को पढ़ाता है तो शायद बच्चे जल्दी ही सहज होते हैं। साथ ही शिक्षक की भाव-भंगिमाओं से भी बच्चे बहुत कुछ ग्रहण करते हैं। जैसे, यदि शिक्षक प्रजनन तंत्र और प्रजनन पर बात करते हुए खुद ही आंखें चुराता रहे तो बच्चे यह समझने में देर नहीं लगाते कि इस विषय में जरूर कुछ गड़बड़ है।

शिक्षक सामाजिक हकीकत को न तो एकदम बदल सकता है और न ही टाल सकता है। यदि वह इन विषयों को छोड़ता है तो वह बच्चों के लिए यह संकेत दे रहा होता है कि ये विषय पाठ्यपुस्तकों में रखने भर के लिए हैं, कक्षा में इन्हें न तो पढ़ा जा सकता है और न ही पढ़ाया जा सकता है। अतः शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों की बनने वाली इस मानसिकता को तोड़ने के लिए पूरी तैयारी के साथ काम कराए। शिक्षक इन मुद्दों पर बच्चों के साथ बात करके न सिर्फ सामाजीकरण से बनी बच्चों की मानसिकता को चुनौती दे रहा होता है बल्कि वह समुदाय में बहुत हल्के से इन विषयों को चर्चा के लिए भी खोल रहा होता है।

मैं अपने बारे में कह सकता हूं कि मुझे इस दौरान बहुत सीखने को मिला। मैं स्वयं पहले मानसिक रूप से तैयार नहीं था लेकिन मैंने इस चुनौती को स्वीकार किया और संतोषजनक स्तर पर काम करवाने का प्रयास किया। मेरा मानना है कि ये कुछ पानी में तैरना सीखने जैसा अनुभव है जो बिना पानी में उतरे और तैरने का प्रयास किए हासिल नहीं हो सकते। मैंने सोचा कि इस तरह के मुद्दों के जरिए सामाजीकरण से तैयार मानसिकता को भी प्रश्नित किया जा सकता है कि क्यों हम बहुत से मुद्दों पर चर्चा करते हैं और कुछ से कतराते हैं। सेक्स एज्युकेशन के शोर-शराबे ने इस तरह के विषयों को खास दर्जा दे दिया है लेकिन यदि शिक्षक सहजता से बाकी विषयों की तरह इस पर भी काम करे तो विषयों के और दायरे बनाने की जरूरत नहीं है। ◆